International Journal of Applied Research 2016; 2(1): 385-387

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 385-387
www.allresearchjournal.com
Received: 28-11-2016
Accepted: 29-12-2016

दीपवाली
अस्सिटैंट प्रौफेसर, राजकीय नेशनल महाविद्यालय, सिरसा।

Correspondence
दीपवाली
अस्सिटैंट प्रौफेसर, राजकीय नेशनल महाविद्यालय, सिरसा।

नई कहानी में चित्रित राजनीतिक परिदृश्य

दीपवाली

प्रस्तावना

वर्तमान राजनीति मूल्यहीन राजनीति है। इस राजनीति का उद्देश्य केवल मात्र सत्ता हथियाना है। इसी संदर्भ में भारतीय राजनीति का चेहरा इतना कुरूप और विघटित हो चुका है कि राजनीतिक पार्टियां धर्म के नाम पर लोगों को लड़ाती हैं। मंदिर और मस्जिद को लेकर यहां फसाद खड़े होते हैं। प्रभा सक्सेना की कहानी 'कीं कुछ ओर' में लेखिका लिखती हैं कि मंदिर निर्माण के लिए रथ यात्रा का आयोजन किया गया है। यह रथ यात्रा पूरे देश में निकाली गई। हिंदुओं की भावनाओं को वोटों के तराजू में तोलने की कोशिश की गई।[1] भारतीय राजनीति में जो कुछ भी किया जाता है, वह सब वोट को ध्यान में रखकर किया जाता है। अयोध्या का मंदिर–मस्जिद विवाद, शाहबानों और सबिया के प्रसंग सभी कुछ वोट की राजनीति के कारण ही घटित हुआ। ये सभी घटनाएं राजनीति की शतरंज की मोहरें हैं। हर राजनीतिक पार्टी अन मोहरों का प्रयोग अपने ढंग से करती हैं। हर घटना को ढंग से पेश करती है कभी लोगों को भुलाती है और कभी लोगों को आकर्षित करती है। ये सब सोचते–सोचते 'जलती छाया' के युसूफ को लगता है वह जड़ हो रहा है, उसके सोचने की शक्ति घट रही है।

राजनैतिक मूल्य पूरी तरह से विघटित हो गए हैं। चुनाव के मौके पर धन के जोर पर प्रतिद्वंद्वी उम्मीदवार को बिठा दिया जाता है। उसके सामने धन के प्रलोभन खड़े किए जाते हैं। यदि वह मान जाए तो ठीक है अन्यथा लाठी, गोली के प्रयोग द्वारा उसे दबाया जाता है। कमलचंद वर्मा अपनी कहानी 'भंवरजाल' में इस ओर संकेतम करते हैं कि रसिक लाल का छोटा भाई सुखदेव बाजाराम के पास आता है और कहता है– ''चौधरी, मुझे बड़े भैया न भेजा है। वे चाहते हैं कि आप चुनाव में न खड़े हों। पर, मैं चुनाव में खड़े होने का मन बना चुका हूं। '' इसमें कोई फायदा नहीं चौधरी। फायदे–नुकसान की चिंता मुझे है। आप फिजूल ही भैया के वोट काटने पर तुले हैं। भैया की बात मान लेने से आपका ही फायदा है। 'क्या फायदा है?' आपको कितना रूपया चाहिए?'' मैं बिकाऊ नहीं हूं। भैया आपको दो लाख रूपये देंगे। मुझे मंजूर नहीं। चलिए....आखिर....मैं आपको पांच लाख रूपये दिलवा दूंगा। आपको बस इतना करना है....भैया के चुनाव प्रसार में सहयोग करना है। बाजाराम सोच में पड़ गया। सुखदेव ने कहा, ''चौधरी, याद रखो, पांच लाख रूपये तुम जिंदगी भर कमा नहीं सकते। घर आई लक्ष्मी को ठुकराओ मत। समाज सेवा अलग बात है और जिदंगी जीना अलग बात है। तुम्हें अपनी बेहतर जिंदगी के बारे में सोचना चाहिए। फिर यह भी तो हो सकता है कि तुम चुनाव हार जाओ.....तब क्या होगा? [2]

प्रशासनिक बोध

भारतीय प्रजातंत्र में देश की सत्ता को आई.ए.एस. ऑफिसर चला रहे हैं। उन लोगें को सरकार की ओर से बहुत अधिकार और बहुत सुविधाएं उपलब्ध हैं। प्रशासन का बोध उनकी हर भाव–भंगिगाओं से उजागर होता है। रामधारी सिंह दिवाकर की कहानी 'नवजात' में कलक्टर साहब की पत्नी प्रशासनिक बोध के गर्व से ओतप्रोत है। कहानीकार के शब्दों में–''मेम साहब मुग्धभाव से देखने लगी बंगलों में कहां? इतना बड़ा अहाता, फूलों से भरा गॉर्डन, चारदीवारी के किनारे–किनारे तरह–तरह के पेड़ों की कतार.....। गेट पर तैनात सशस्त्र सिपाही, माली, अर्दली, नौकर, रसोइया और फोन की ड्यूटी करने वाला कर्मचारी। जहां भी जाती हैं मेम साहब, लोगों में फुसफुसाहट होने लगती है– मेम साहब, कलक्टर साहब की मैडम। लोग सहमे–सहमे देखने लगते हैं मेम साहब को। गर्व से फूली मेम साहब इधर–उधर देखती है और अतिरिक्त रूप से सचेष्ट होकर शिफॉन की कीमती साड़ी से अपनी दोनों बाहें पूरी तरह ढक लेने की कोशिश करती है।''[3]

स्वतंत्रता के बाद प्रशासन में बड़ी शिथिलता आई है। कर्मचारियों का केवल एक ही लक्ष्य बन गया है। किसी भी तरह से सरकारी पैसे और सरकारी सुविधाओं पर मौज–मसती की जाए। इस संबंध में 'मेला' कहानी में ममता कालिया लिखती है–'' गाड़ियों का काफिला पुलिस और प्रशासन की छोलदारियों में झूम रहा है। सफेद हाथियों–सा। जब गाड़ी सरकारी हो, ड्राइवर सरकारी हो, पेट्रोल

भी सरकारी हो और सवारी निजी हो फिर न पूछिए मस्ती, सर्दी में भी गर्मी लगती है, दिल से एक ही आवाज निकलती है– जय मां गंगे, जय मां गंगे।''[4]

नरेंद्र कोहली की कहानी 'डिलिंग' के ''शर्मा जी पुराने कर्मचारी थे और काम करने के मामले में उनकी धाक भी काफी थी।'' [5] वह किसी भी अधिकारी का रोब नहीं मानते थे। एक बार दफ्तर में उनका अपने अधिकारी से झगड़ा हो गया, अधिकारी ने उन्हें अधिक काम वाली सीट दे दी– ''उसने तीन आदमियों का काम इकट्ठा कर एक मेज पर लगवा दिया था और काम कर दिया था शर्मा जी के जिम्मे'' [6] काम इतना था कि खत्म नहीं होता था और अधिकारी उन्हें घुड़कियां देता, उन्हें अयोग्य सिद्ध कर उनके विरूद्ध शिकायत लिख देता। शर्मा जी असुर की दींगामुस्ती से तंग आ गए और उन्होंने अपने सामने खड़ी भीड़ के लोगों को परस्पर लड़ा दिया। इससे पहले कि अधिकारी कुछ कहता शर्मा जी ने उससे कहा–''आपके दफ्तर में कोई अनुशासन नहीं है। अब आप ही कहिए, ऐसे वातावरण में कोई कैसे काम कर सकता है।'' [7] अधिकारी भांप गया कि सारे झगड़े की जड़ शर्मा जी हैं और उसने कहा कि–''शर्मा जी, आप अपनी पहली सीट पर ही जाएं। आप वहीं शांतिपूर्वक काम कर सकते हैं। इस सीट पर पब्लिक डिलिंग का काम है और पब्लिक डिलिंग आपके वश की नहीं है।'' शर्मा जी ने सिर झुकाए प्रसन्नतापूर्वक अधिकारी की आज्ञा मान ली। वे अपनी पुरानी सीट की ओर चले तो म नही मन मुसकरा रहे थे–'डिलिंग मेरी ठीक रही या तुम्हारी, अधिकारी महोदय?.....'' [8] उपर्युक्त कहानी से स्पष्ट है कि प्रशासनिक अधिकारी किसी भी ईमानदार और शरीफ आदमी को सही ढंग से काम नहीं करने देते और उनका दृष्टिकोण अपने अधीनस्थ कर्मचारी को परेशान करने का ही रहता है।

भारत की प्रशासनिक व्यवस्था में कहीं न कहीं गड़बड़ होती रहती है। 'जांच' कहानी में –''दो दिन पहले अखबार में खबर छपी थी। एक अखबार ने 'सुंदरगांव के स्कूल में अव्यवस्था' शीर्शक से खबर छापी। एक अखबार ने शीर्षक दिया 'स्कूल में शराब की बोतलें और टूटी हुइ चूड़ियां पाई गई' और एक अखबार ने छापा कि 'स्कूल भवन समाज विरोधी गतिविधियों का अड्डा बना' हर अखबार ने सुंदरगांव के खिलाफ खबरें छापी थी। ये खबरें बिसातीलाल ने भी पढ़ी थी। इन खबरों को पढ़क रवह चिंता में पड़ गया था। झुंझलाहट–सी हुई थी कि कैसे लोग हैं। छोटी–सी बात को अखबारों तक पहुंचा दिया।''[9]

राजनीति ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। इसके दखल से कोई भी आदमी बचा हुआ नहीं है। राजनतिक पार्टी बाजी ने आम आदमी का जीना मुश्किल कर दिया है। राजनीति से जुड़ा आदमी यदि किसी को कोई काम दिलवाता है तो उसे अपने अहसानों के नीचे दबाए रखना चाहता है। राजनेता आम आदमी को दबाकर रखने में विश्वास करता है।

हरीष पाठक की 'तिर्यक' कहानी में मनमोहन यही हिसाब लगाता रहता है कि इस बार चुनाव में कौन जीतेगा और कौन हारेगा और सोचता है कि राजनति से जुड़े लोग आम आदमी से ऐसा दुर्व्यवहार क्यों करते हैं, वह नरेन से कहता है–''नौकरी तो मुझे मिल गई पर जानते हो वे क्या पूछ रहे थे– किस पार्टी के आदमी हो? हर बार किसे वोट देते हो–लल्लन बाबू को या गोकुल बाबू को?'' फिर दीवार से तरह देखते–देखते ही बोला–''कितनी ईमानदारी से मैं केंचुए का डिसेक्शन किया करता था। जानते हो नरेन, उसकी 'ब्रेन रिंग' निकालने के लिए पूरे तीन घंटे लगते थे। वह भी साबुत–गोल, कहीं से भी टूटी फूटी नहीं। और ये टोपीवाले लोग पार्टी पॉलिटिक्स की बात करते हैं।'' लगा था उसने अपने शब्दों को जबरन धक्का दिया था।''[10]

रामधारी सिंह दिवाकर की 'नवजात' कहानी में बलराम बाबू कलक्टर साहब की पत्नी सुरसती से काम लेने के लिए यदा कदा भेंट के रूप में दाल, चावल, घी आदि लाते रहते हैं। कहानीकार के शब्दों में–''बलराम बाबू जीप से उतर कर बरामदे पर आए और बड़ी विनम्रता से उन्होंने मेम साहब के पैर छुए। मैम साहब गर्व से मुस्कराई। नौकर की मदद से बलराम बाबू जीप से सामान उतारने लगे। दो बोरियां बासमती चावल की, एक बोरी में अरहर की दाल थी और बड़े से कनस्तर में देसी घी था। मेम साहब को खुशी हुई सामान देखकर, फिर भी उन्होंने कहा, आप फिर ले आए सामान? यहां कवनो की कमी है क्या? अपनी दोनों हथेलियों को आपस में रगड़ते हंसने लगे बलराम बाबू। 'बहिन के यहां खालिये हाथ झुलाते कैसे आऊं?'' मेम साहब ने सामने की खाली कुर्सी पर बैठने में घबड़ाता हूं। मेम साहब ने जब दूसरी बार बोलकर बैठने का आग्रह किया तो बलराम बाबू कुर्सी खिसकाकर सहमे हुए बैठ गए।'' [11]

भ्रष्टाचार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उभर आया है। शिक्षा का क्षेत्र भी इससे बचा नहीं है। 'अप्रत्याशित' कहानी में एक महिला जिसकी बेटी के लैक्टर कम है वह टीचर से कहती है– ''तुम ऐसा करो...' आने वाली महिला ने कविता की बात बीच में ही काटी, ''तुम वी. सी. को लिख दो कि इससे अटेंडेंस में गलती हो गई। यह बराबर आती रही थीं इसे एक्जाम में बैठने दिया जाए।

और रजिस्टर में जो सब जगह 'ए' लगा है, उसका क्या होगा? कविता के स्वर में खीझ उभर आई थी।

'तुम चाहो तो सब कुछ हो सकता है।' मुझे लगा कि मैं किसी शड्यंत्र की भूमिका सुन रहा हूं। चम्मच थामे मेरा हाथ मुंह के पास ही रूक गया। पल भर के मौन के बाद सुनाई दिया–''रजिस्टर तो गायब हो जाएगा।' एक चुटकी की आवाज.....और फिर सन्नाटा।''[12]

रिश्वत और घूसखोरी पुलिस की नस–नस में भरी पड़ी है। 'ठंडी होती धूप' कहानी में गांव का सरपंच हठीसिंह बिरजू के हाथ एक लिफाफा थानेदार को देने के लिए भेजता है। एक केस को दबाने के लिए थानेदार ने पांच हजार रूपये मांगे थे, लेकिन थानेदार के भाई के हाथ लिफाफा भेजकर उसने एक हजार रूपये बचा लिए–''हठीसिंह ने अपना काम निकालने के लिए उसका इस्तेमाल किया है। 'काका' कहकर उसने हजार रूपये बचा लिए।.....और इस चंद्रपाल को देखो। इसक बात करने को लहजा देखो। रूपये कम लेकर जैसे उस पर अहसान कर रहा हो। उसे इन कामों से क्या लेना–देना? अनजाने ही इनके हाथों की कठपुतली बन गया। उसने स्वाभिमान भरे शब्दों में कहा,'' थानेदार, मुझे पता नहीं था कि हठीसिंह लिफाफे में रिश्वत के रूपये भेज रहा है वरना मैं इसे लेकर नहीं आता। तुम मेरा लिहाज मत करो। तुम्हारा उससे जो हिसाब बनता है, वह लो। मुझे बीच में मत लाओ। मुझे किसी से कोई लेना देना नहीं है।''[13]

कहानी में शर्मा जी और सूरी साहब के संवादों से पुलिस की क्रूरता का पता चलता है–'' सब कुछ जानते हुए भी? शर्मा जी बहुत दुःखी थे। हां, सूरी साहब धीरे–से बोले, ''बात यह है कि डी.एस. पी. से निशानचंद की बात हो चुकी है। ऊपर के अफसरों का उनका पुरस्कार पहले ही दे दिया गया है।'' सूरी साहब तनिक ककर बोले ''जब ये लठैत रामप्यारा को घेरकर पीटेंगे तो वहां भीड़ तो जमा हो ही जाएगी। उसी भीड़ में पुलिस के सिपाही भी जा मिलेंगे। वे भी लाठियां चलाएंगे, पर वे लाठियां इस भांति चलाएंगे कि लगेगा तो यही कि वे भीड़ और हत्यारों से रामप्यारा को बचा रहे हैं, पर वस्तुतः वे भीड़ को रामप्यारा और हत्यारों के बीच में आने से रोकेंगे और इस बीच हत्यारे रामप्यारा का काम तमाम कर देंगे।''[14]

राकेश वत्स की कहानी ' बिरजू तो मारा ही जाएगा' में बिरजू जगदीश की बहन का बलात्कार करता है और फिर हत्या लेकिन बाद में चश्मदीद गवाह के मुकर जाने से अदालत में बरी हो जाता है। जगदीश सोचता है कि–'पत्थरों पर घिसटकर बिरजू जब मर जाएगा तब क्या पुलिस उसे कत्ल के केस में गिरफ्तार नहीं कर लेगी? बहुत यातना भोगनी पड़ती है थाने की हवालात में मुजरिम को। मार–मारकर भुरता बना देते हैं पूछताछ करने वाले।''[15]

उसे लगता है कि वह बिरजू का कत्ल करने से पहले ही पकड़ लिया जाएगा उसकी योजना की भनक पुलिस को पहले ही हो

जाएगा और ''पुलिस छोटी–छोटी बात को आसानी से बड़ी बना लेती है। तिल का पहाड़ बनाना पुलिस को ट्रेनिंग में ही सिखा दिया जाता है। काम सिरे भी न चढ़े और वह पहले ही शक की बिना पर हवालात में बंद कर दिया जाए तो?....नहीं, नहीं, उसे पूरी तरह से सावधान रहना चाहिए। कोई छोटा–मोटा सबूत भी अपने आसपास नहीं छोड़ना चाहिए। कमाल तो इस बात का होना चाहिए कि सांप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे। हां.....लाठी भी न टूटे।''[16]

निष्कर्ष

भारतीय पुलिस तंत्र बहुत ही निर्मम और क्रूर है। यह निरपराधी को मार–मार कर अपराध कबूल करने पर बाध्य कर देता है। राजनेताओं के इशारों पर काम करता पुलिस तंत्र किसी भी शरीफ और ईमानदार आदमी को ठिकाने लगा देता है। नरेंद्र कोहली की कहानी 'चमत्कार' के रामप्यारे को ठिकाने लगाने की योजना पुलिस विभाग में बनाई जाती है।

सदर्भ

1. प्रभा सक्सेना, कहीं कुछ ओर (जलती छाया), पृ0 105
2. कमलचंद वर्मा, भंवरजाल (बेदखल), पृ0 44.48
3. रामधारी सिंह दिवाकर, नवजात (धरातल), पृ0 55
4. ममता कालिया, मेला (बोलने वाली औरत), पृ0 15
5. नरेंद्र कोहली, डिलिंग (एक दिन मथुरा में और अन्य कहानियां), पृ0 60
6. नरेंद्र कोहली, डिलिंग (एक दिन मथुरा में और अन्य कहानियां), पृ0 60
7. नरेंद्र कोहली, डिलिंग (एक दिन मथुरा में और अन्य कहानियां), पृ0 64
8. नरेंद्र कोहली, डिलिंग (एक दिन मथुरा में और अन्य कहानियां), पृ0 64–65
9. कमलचंद वर्मा, जांच (बेदखल), पृ0 116
10. हरीश पाठक, तिर्यक (गुम होता आदमी), पृ0 2.23
11. रामधारी सिंह दिवाकर, नवजात (धरातल), पृ0 66
12. सीतेष आलोक, अप्रत्याशित (नासमझ), पृ0 41
13. कमलचंद वर्मा, ठंडी होती धूप (बेदखली), पृ0 96
14. कमलचंद वर्मा, ठंडी होती धूप (बेदखली), पृ0 96
15. 15,16 राकेश वत्स, बिरजू तो मारा ही जाएगा (इन हालात में), पृ0 34